Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852
Received: 29-08-2021, Accepted: 15-09-2021, Published: 29-09-2021
Volume 2, Issue 2, 2021, Page No. 24-28

समकालीन कविता: जीवन के आयामों का आइना

डॉ. रॉय जोसफ
अध्यक्ष, हिन्दी, विभाग, एस. बी. कालेज, चंगनाशेरी, केरल, भारत

सारांश

समकालीन कविता अपनी निरंतरता से गतिशील है। समकालीन परिदृश्य में रचना की अनेक सरणियों का विकास हुआ। समकालीन कविता का कैनवास बहुत ही विशाल है। उसमें जीवन के बहुमुखी अनुभव-खण्ड पिरोये गए है। विशाल अनुभव फलक होने के कारण कविताओ के क्षितिंज बहुत दूर-दूर तक फैले हुए है। समकालीन कविता के सकारात्मक पक्षों ने मनुष्य संवेदना की रक्षा का काम किया है। कविता हमारे प्रश्नों का समाधान नहीं करती। वह हमारी चेतना में प्रश्न-दर-प्रश्न पैदा कर रही है। हमारा समकालीन कवि इन्हीं चुनौतियों से जूझ रहा है एवं उसका सही सबक देने केलिए प्रण लेकर प्रस्तुत है।

मूल शब्द: समकालीन कविता, समकालीन परिदृश्य, मनुष्य संवेदना

प्रस्तावना

स्थिति और गति, निरंतरता, कैनवास, बहुमुखी अनुभव-खण्ड, अवधारणा, हानिकारक, अवांछित तत्व, साधन-संसाधन, विज्ञापनों के अंकुश, महानगरीय जीवन, मार्मिक और संवेदनात्मक समकालीन कविता की स्थिति और गति में अनेक विविधताएँ है। विविधता की दृष्टि में यह कविता अपने पूर्ववर्ती किसी काल की कविता से अधिक वौविध्यपूर्ण और बहु आयामी है। समकालीन कविता अपनी निरंतरता से गतिशील है। समकालीन परिदृश्य में रचना की अनेक सरणियों का विकास हुआ। यहाँ विचारों की अनेक पद्धतियाँ और विचाराधाराएँ परस्पर संधर्ष करती हुई देखी जा सकती है, जिनका सरोकार व्यक्ति और समाज जीवन से हो रहा है। समकालीन कविता के अनुभव जगत का दायरा विविध एवं व्यापक है उसमें आत्मपरकता के अन्तर्गत वैयक्तिक अनुभूतियों का एक संसार है। समकालीन कविता का कैनवास बहुत ही विशाल है। उसमें जीवन के बहुमुखी अनुभव-खण्ड पिरोये गए है। विशाल अनुभव फलक होने के कारण कविताओ के क्षितिंज बहुत दूर-दूर तक फैले हुए है।

समकालीन कविता धारा में कई पीढियों के कवि रचना करने में संलग्न है। एक ओर जहाँ त्रिलोचन, भगवत रावत जैसे वरिष्ठ कवि समकालीन कविता केलिए वरदान बने हुए है वही पर विनय सौरभ, कात्यायनी, अनामिका जैसे कम उम्र के कवियों ने भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जीवन के बहुमुखी अनुभव खण्डों को समेट पाने में समकालीन हिन्दी कविता सक्षम है।

समकालीन कविता का अनुभूति - संसार, व्यापकता को समेटे हुए आगे बढता रहता है। जीवन के बहुमुखी

अनुभव-खण्ड समकालीन कविता केलिए अलंकार नहीं, आवश्यकता बन जाते हैं।

कवि नरेंद्र पुंडरीक 'घर के नक्शे' शीर्षक कविता में लिखते हैं-

"घर बन रहा है घर के नक्शे में माँ नहीं थीं
नहीं थे कहीं घर के नक्शे में पिता
घर के नक्शे से गायब हो रहा था
माता-पिता का घर
नक्शे में एक पूजा का कमरा है
माना जा रहा है कि
इसी में दिन भर रह लेंगी माँ
और बाहर बरामदे में जो रात में खाली रहेगा
उसमें ही सो लेंगे पिता।"[1]

आज संयुक्त परिवार की अवधारणा पूरी तरह से टूट चुकी है। माँ और पिता तक भी धर से निकाले-हटाये जा चुके हैं। जब घर का नक्श बनता है तब सभी लोगों के लिए, सभी चीजों के लिए स्थान सुरक्षित रहता है लेकिन माँ और पिता, जहाँ से व्यक्ति का उत्स होता है उन्हीं के लिए स्थान नहीं बचता है। आखिर ऐसा क्यों होता है? क्या मां और पिता बच्चों के लिए अवांछित तत्व हो गए हैं या ऐसी कोई नई धारण ही पनय गई है कि घर में इनकी उपस्थिति संतानों केलिए हानिकारक हो गई है? हमारा जीवन अब ऐसा बन गया है कि हम अपनी जड़ों से कटकर शून्य में विचरण करने के लिए बाध्य हैं। उपयोगवादी संस्कृति में हमारा संबंध उन्हीं लोगों से है जिनसे हमारा काम बन सकता है, हमारा काम पड़ सकता है, जो बोझ होते हैं उनसे जल्द ही छुटकारा पा लेना आज के आधुनिक समाज के पश्चिमी देशों की संस्कृति की नकल है। जब हम विदेशी जीवनशैली को अपनाते हैं तो हमारे विचार भी उसी तरह से बदल जाते हैं। विदेशों में तो साधन-संसाधन के अनेक अवसर उपलब्ध होते हैं लेकिन अपने देश में तो यह भी नहीं है। फलतः कविता, कहानियों में यह देश बार-बार देखा जा रहा है कि किस तरह से लोग अपने माता-पिता से छुटकारा पाने के लिए किस स्तर तक प्रयासरत हैं। नरेंद्र पुंडरीक की कविता में पुरानी पीढ़ी से अलगाव का यह तीखा अनुभव साफ-साफ झलकता है जो यह संदेश देता है कि हमारा समाज अब पूरी से बदल चुका है।

समकालीन कविता में अपने प्रश्नों और चुनौतियों को अलग-अलग ढंग से सुलझाने का प्रयास चलता रहता है, इसलिए सभी समकालीन कवि इस समय के प्रमुख सामाजिक सरोकारों को प्रत्यक्ष करने का प्रयास करते हैं। कवि सर्वेश्वर दयाल की एक और कविता है - 'भूख' जिसमें वे कहते हैं-

"जब भी
भूख से लड़ने
कोई खड़ा हो जाता है
सुंदर दीखने लगता है।
झपटता बाज
फन उठाये साँप
दो पैरों पर खड़ीं
काँटों से नन्हीं पत्तियाँ खाती बकरी
दबे पाँच झड़ियाँ में चलता चीता
डाल पर उल्टा लटक
फल कुतरता तोता
या इन सबकी जगह
आदमी होता
जब भी
भूख से लड़ने
कोई खड़ा हो जाता है
सुंदर ही दीखने लगता है।" 2

भूख की समस्या केवल समकालीन समस्या ही नहीं है, बल्कि जबसे इस सृष्टि का निर्माण हुआ है तब से जीवमात्र के लिए यह सबसे बड़ी कठिनाई उभरकर सामने आई है।

आज का समय विज्ञापन का समय है। विज्ञापन ने हमारे जीवन को इतना ज्यादा प्रभावित किया है कि उसका साफ-साफ असर देखा जा सकता है। विज्ञापन के इस दौड़ ने समकालीन जीवन के मुहावरे को ही बदल दिया है यानी पूरा अर्थशास्त्र विज्ञापन का ही है। जब भी कोई कार्यक्रम होता है चाहे खेल हो या नृत्य-संगीत हो या कोई शैक्षिक कार्यक्रम हो या साहित्यिक कार्यक्रम, उसे बाजार और विज्ञापन के नजरिये से देखकर प्रसारित और प्रचारित किया जाता है। यहां तक कि आज हमारे घरों में जो अखबारों से खबरें आती हैं उन पर भी विज्ञापन की दुनिया की पहरेदारी लगी होती है। हम किसकी छवि देखें, किसकी छवि देखने से विज्ञापन को लाभ मिलेग, प्रायोजक खुश होंगे और उपभोक्ता को अपनी वस्तुएँ बेच सकेंगे - यह सब कुछ एक तरह से तय है। हिंदी कविता में अनेकानेक कविताएँ हमारे जीवन पर छाये विज्ञापनों के अंकुश से संबंधित हैं। अजय कुमार की कविता 'यह अखबार आज का है' इसी अनुभव को प्रत्यक्ष करती है-

“यह अखबार आज का है
अभी-अभी आया है
हर पन्ना जोड़े में है
सबका जोड़ा विज्ञापन है
विज्ञापन में खबरे हैं
खबरों में विज्ञापन
विज्ञापन भी पुराने हैं
लेकिन अखबार है आज का
पुरानी रस्मों का नया संस्करण।“3

कवि अजय कुमार इस विज्ञापन-जाल का सीधा प्रभाव हमारे जीवन पर यह पाते हैं कि आज जो भी अखबार जा रहा है, जो भी खबरें बन रही हैं वे सब विज्ञापन के निमित्त हैं और विज्ञापन से निर्मित हैं। हमारे जीवन में जो खबरें हैं या खबरों में जो विज्ञापन है वह यह दर्शाता है कि एक अदृश्य शक्ति हमारे तमाम दैनंदिन की जरूरतों को अपनी निगरानी में रखे हुए है। यह अदृश्य शक्ति कोई ईश्वर या प्रकृति नहीं हैं, वह तो इसी धरती पर, इसी देश को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष चलाने वाला, विज्ञापन से धन कमाने वाला और धन से विज्ञापन चलाने वाला कोई बड़ा सेठ या साहूकार है, पूँजीपति है जिसने हमारे जीवन को विज्ञापन बनाकर रख दिया है अर्थात मनुष्य का जीवन उसका अपना होकर भी उसका अपना नहीं है। स्वतंत्रता, समानता सब कुछ होते हुए भी समकालीन मनुष्य का जीवन मानों किसी बड़े पूँजी बाजार में बिकने के लिए तैयार है।

समकालीन जीवन में सब तरफ एक प्रकार की भागदौड़ और आपाधापी-सी लगी हुई है। जीवन में इतना ज्यादा तनाव आ गया है कि मनुष्य को एक क्षण भी ठहराने की फुर्सत नहीं है। खासकर महानगरीय जीवन तो इस भी व्याधि से बुरी तरह छटपटा रहा है। देश के बड़े महानगरों में जीवन इतना यांत्रिक हो गया है कि बच्चे, बूढ़े सभी के सभी इस दौड़-भाग से बुरी तरह ग्रस्त हैं। पलाश विश्वास की 'फिलहाल' कविता में आज के बच्चों की यांत्रिकता को काफी करीब से समझा जा सकता है-

“खिलखिलाते नहीं हैं बच्चे आजकल
आँख मिचोली नहीं खेलते
किसी के कंधे पर सवार नहीं होते
बहुत रफ्तार से सरपट
गाड़ियों में दौड़ते हैं बच्चे आजकल
शैतानियाँ भूल गए बच्चे
अचानक बढ़े हुए से लगते हैं
बच्चे आजकल बच्चे
नहीं लगते।”[4]

बच्चों के जीवन से मासूमियत का छीना जाना एक बहुत बड़े विमर्श की वस्तु बनकर प्रायः हमारे समाज के बौद्धिक वर्ग के लोगों के पास आती रहती है। आज हम बच्चों को तरह से तैयार करते हैं मानों वे कोई

यंत्र हों। परिणामस्वरूप ये बच्चे आगे चलकर तमाम मानवीय संवेदनाओं से मूल्य हो जाते है।

समकालीन कविता हर तरह की विषमताओं एवं विद्रुपताओं से लड़ती हुई कविता है। अंतर चाहे वर्ग का हो, या वर्ण का या रंग का। जो विषमताएँ जीवन को झकझोर देती हैं, समकालीन कविता इनके खिलाफ खड़ीं रहती है। 'काली लड़की' शीर्षक कविता में कवि कुमार विश्ववबंधु ने एक काली लड़की की तृष्णा को बेबाकी से चित्रित किया है। काली लड़की में सब कुछ गोरा है, सिर्फ उसकी चमड़ी काली है अर्थात उसमें वो सारी खूबियाँ हैं जो किसी खूबसूरत लड़की में होती हैं लेकिन वह जीवन भर काले रंग का दंश झेलती रहती है-

"ट्राम में सेकेंड क्लास की खिड़की पर काली लड़की
देखती है दुनिया
दुनिया की काली सड़कों पर दौड़ती है रंग-बिरंग कार
लड़की के मुँह पर धुँआ फेंकती निकल जाती है दूर।
दुनिया व जहान में बौखती काली लड़की
बनाना चाहती है मिस यूनिवर्स
सिनेमा हाल के अंधेरे में

चोरी चोरी उतर जाती है पर्दे पर
टूथपेस्ट के विज्ञापन में
हँसती है काली लड़की
पुराने सो के आधे टिकट की तरह
देर रात लोटती है घर

टीन की चाल के नीचे गुमसुम
मूढ़ी के साथ चबाती है दिवास्वत्न
मध्यरात्रि को सारे शहर की चुप्पी पर करवट बदलती
दर्द की तरह जागती है काली लड़की।" 5

कवि कहता है कि काली लड़की का सफर एक कठिन सफर होता है। वह भी चाहती है कि दुनिया में उसे उसका स्थान मिले परंतु उसका पूरा जीवन मानों इस मुहावरे के तले पिस जाता है - 'गोरे रंग का जमाना कभी होगा न पुराना'। लोगों की चाहत है गोरा रंग। गोरे रंग से जुड़ी सभी वस्तुएँ बिक जाती हैं, बाजार में, शहर में, गाँच में सभी गोरे रंग पर मरते हैं। इसलिए रात को काली लड़की जब थककर अपने घर लौटती है तब दर्द की तरह जागती है। इस कविता में काले और गोरे रंग के माध्यम से कवि ने दो विषम दुनियाओं का चित्र खींचा है। रंग-भेद भी एक तरह से वर्ण-भेद और वर्ग-भेद की तरह शातिर और जानलेवा होता है। कवि ने इस कविता के द्वारा समकालीन हिंदी कविता में एक नये आयाम को छुआ है।

समकालीन कविता में स्त्री-विमर्श का भी एक अलग स्थान है। स्त्रियों की दुनिया की अनुभूतियाँ अगर कोई प्रस्तुत करती है तो वह और भी मार्मिक और संवेदनात्मक बन पड़ती हैं। 'कोख की अधखिली कली' कविता में अंजना बखशी का अनुभव भी आज के समाज की ज्वलंत समस्या यानि कन्या-भ्रूण-हत्या की समस्या रेखांकित करता है-

"मेरी मौन वाणी काश!
तुम समझ पाती
अभिलाषाओं का मेरी
गला तो न दबाती
अदम्य जीवन को मैं
भी जीना चाहती थी
हँसती, मुस्कुराती
मैं भी खिलखिलाती
तुम्हारी कोख से
जन्म लेकर नवीन सृजन।”[6]

कवयित्री ने इस कविता में अजन्मी कन्या शिशु की अदम्य जीवन-इच्छा, अभिलाषाओं को दर्शाया है। इस कविता में कवयित्री का यह दर्द कि आगर कन्या शिशु को जन्म देने का मौका दे दिया जाता तो वह भी जीवन भर हँसती, मुस्कुराती और खिलखिलाती अपने आपमें काफी आशाओं को संजोने का प्रयास है।

संक्षेप में कह सकते है कि समकालीन कविता के सकारात्मक पक्षों ने मनुष्य संवेदना की रक्षा का काम किया है। शोषण के विरुद्ध, रुढियों के विरुद्ध, और समाज में जहर फैलानेवाले निकायो के विरुद्ध समकालीन कविता ने सशक्त मोची खोला है। अतंकवाद के विरुद्ध संप्रदाायीकता के विरुद्ध आपातकाल के विरुद्ध समकालीन कविता ने ऐतिहासिक कार्य किया है। वस्तुतः कविता हमारे प्रश्नों का समाधान नहीं करती। वह हमारी चेतना में प्रश्न-दर-प्रश्न पैदा कर रही है। आज के यांत्रिक समय की चुनौतियां कविता को हाशिए की चीज़ बनाने पर तुली है। हमारा समकालीन कवि इन्हीं चुनौतियों से जूझ रहा है एवं उसका सही सबक देने केलिए प्रण लेकर प्रस्तुत है।

सन्दर्भ सूची

1. नरेन्द्र पुण्डरीक: घर के नक्शे में कथादेश अप्रैल 2005, पृष्ट 65
2. अर्वेश्वर दयाल सकसेना: भूख, प्रतिनिधि कविताएँ, सं प्रयाग शुव्ल, पृष्ट 25
3. अजय कुमार: सर अखबार आज का कथादेश जुलाइ 2004, पृष्ट 25
4. पलाश विश्ववास: फिलहाल, अक्षरपर्व अप्रैल 2002, पृष्ट 39
5. कुमार विश्वबन्धु: काली लडकी कथादेश जुलाई, 2004, पृष्ट 190
6. अजना वरव्शी: कोख की आधखिली कली कथादेश जुलाई, 2004, पृष्ट 83